सींग

राजेश जोशी

ताज़ी मूलियों की तरह सफेदझक्क और नोकदार सुबह थी। सुबह-सुबह इतनी सुबह हो गई थी कि दिन बाँस भर चढ़ा लग रहा था। छतों से उतरती धूप नीचे तक आ गई थी और गली से गुज़रते लोगों के सर पर टोपियों की तरह चिपक गई थी। काली मिट्टी की अन्दर ही अन्दर चलती योग साधना ने गली में लगी पत्थर की सिल्लियों को ऊबड़-खाबड़ कर दिया था और जगह-जगह से तोड़ डाला था। गली काफी आँकी-बाँकी थी, और घर के एक हाथ बाद ही झोल खाकर आगे बढ़ जाती थी, इसलिए जब दूध वाले गुज़रते तो दूध के बड़े-बड़े डबरे आपस में टकरा कर खड़खड़ाने लगते, मोड़ के कारण दूध वाले घण्टियाँ भी टुनटुनाते। हाल ही में कोई दूध वाला गुज़रा था, आवाज़

कान में पड़ते ही सोनू ने दूध की रट लगाना शुरू कर दिया। कुछ देर से वह रबर के एक पुराने गुड्डे से खेल रहा था जिसके रंग जगह-जगह से उखड़ गए थे और उसकी सीटी निकल चुकी थी। उसे दबाने से हवा की सिर्फ फुस्स-सी आवाज़ होती।

भगवती सुबह की डाक बाँटने चले गए थे। सोनू सबसे छोटा था याने तीसरा और आखिरी। बड़ा शिब्बू तीसरी में पढ़ता था, उसके पीठ की लड़की - मुन्नी। दोनों स्कूल चले गए थे, भौजी सुबह के काम-काज में लगी थीं, उन्होंने दो-एक बार सोनू को चुप कराने की कोशिश की, फिर अपने काम में लग गईं। तभी बिल्ली आ गई। वह चितकबरी, छोटी-सी बिल्ली थी। जो घर में हिल गई थी। सुकड़कर, दुबककर जब वह बैठी होती तो ऊन की लच्छी की तरह लगती। उसकी अक्सर खूब टाँगाटोली होती, वह जिसके हाथ लग जाती वही उसे उठा लेता। कभी उछाला जाता, कभी अगले पैर पकड़कर खड़ा करके चलाया जाता। वह पकड़ से निकलते ही भाग खड़ी होती। बिल्ली को देखते ही सोनू उसके पीछे लपक लिया। कुछ देर तो बिल्ली इधर-उधर दौड़कर कमरे में ही सोनू को छकाती रही, फिर गच्चा देकर दरवाज़े से निकल भागी। सोनू भी उसके पीछे-पीछे बाहर भाग गया। गली थी सो सवारियों का डर नहीं था। बच्चे बेधड़क खेलते रहते। झाड़-बुहार से निपट, भौजी ने रसोई का परदा पनाले की तरफ खींचा और नहाने बैठ गईं।

घर एक लम्बा कमरा-भर था। आधे कमरे के बाद, कमरे को दो कमरे बनाता, कमरे की चौड़ाई से आधी चौड़ाई का परदा लटका था जो ज़रूरत के मुताबिक कभी रसोई की तरफ, कभी पनाले की तरफ खींच दिया जाता।

कहाँ गई बिल्ली
कहाँ गया सोनू
उड़ गई बिल्ली
रह गया सोनू

यह मुन्नी का गाना था, सोनू को जब चिढ़ाना होता तो मुन्नी और शिब्बू, दोनों ताली बजा-बजा कर गाने लगते। एक दिन सोनू किसी बच्चे के पास चाबी वाला खिलौना देख आया था और घर आते ही उसने चाबी वाले खिलौने के लिए मचलना शुरू कर दिया था। बिल्ली भगवती की गोदी में थी। भगवती ने बिल्ली सोनू को थमा दी कि "देखो... यह चाबी वाले खिलौने से भी तेज़ दौड़ती है और इसमें चाबी भी नहीं भरनी पड़ती।" सोनू ने बिल्ली ले ली पर मुन्नी खिलखिला पड़ी तो उसे समझ आ गया। वह गुस्सा होकर बिल्ली लेकर बाहर भाग गया, जल्दी ही उसे बिल्ली के साथ मज़ा आने लगा। एक छोटी-सी गेंद थी, जिसे वह रुड़का देता, बिल्ली उसके पीछे-पीछे भागती और गेंद मुँह में दबा कर लौट आती। गेंद एक दिन फट गई और कहीं फिंका गई। गेंद का खेल

खतम हो गया, बिल्ली और सोनू ने नए खेल तलाश लिए। वह बिल्ली को लेकर ओटले पर आ जाता, ओटले पर बैठी गौरैयों को देख, बिल्ली झपटती। सारी गौरैया चीं...चीं... करके उड़ जातीं और सोनू तालियाँ बजाने लगता।

डाक कम थी। भगवती जल्दी ही लौट आए। बाहर साइकिल टिकाते ही उन्होंने घण्टी बजाई। घण्टी बजते ही सोनू बाहर आ जाता था। उन्होंने एक बार और घण्टी टुनटुनाई, पर इस बार भी जब सोनू बाहर नहीं आया तो हेण्डिल को सीधा करके वे घर में घुस गए। अपनी आदत के मुताबिक, अन्दर घुसते ही उन्होंने कमीज़ उतार कर कन्धे पर रखी ली। इतने में हाथों में बिल्ली को दबाए सोनू भी आ गया। शायद वह कहीं आसपास ही रहा होगा। उसका मुँह तप रहा था। बिल्ली भी शायद थक गई थी, इसलिए मुँह लटकाए सोनू की छोटी-छोटी हथेलियों के बीच झूल रही थी। भगवती को देखते ही उसने बिल्ली को उतार दिया और जाकर भगवती की गोद में

लद गया। कुछ देर वह कुछ नहीं बोला, लेकिन याद आते ही वह फिर दूध के लिए मचलने लगा। साइकिल चलाने की थकान फेफड़ों से निकलकर ऊपर आ गई थी और उसने भगवती के चेहरे को दबोच लिया था। फिर भी उन्होंने पूछा, "अरे तुम्हारी बिल्ली कहाँ गई?" सवाल ऐसा था जैसे दूध वाली बात उन्होंने सुनी ही न हो, बिल्ली वहाँ नहीं थी। सोनू ने एक पल को सारे कमरे में नज़र दौड़ाई। वह थक चुका था और बिल्ली में उसकी उत्सुकता फिलहाल नहीं थी, वह नहीं उठा और पैर पटकने लगा।

साइकिल की सीट खाली देखकर धूप उस पर लद गई थी। बजा पाती तो उस वक्त वह ज़रूर घण्टी टुनटुनाने लगती और सोनू को बाहर बुलाकर गली का एक-आध चक्कर मार देती। दो-एक बार धूप ने दरवाज़े से झाँक कर सोनू को देखा भी, पर वह अपनी ज़िद में लगा था। भगवती को अभी नहाना था और खाना खाकर वापस डाकघर पहुँचना था। शाम वाली तीसरी डाक बाँटनी थी। पिछले महीने दुपहर वाली डाक पर थे, तो थोड़ी फुरसत थी। कोई बड़ा मनीऑर्डर होता तो रकम की तौल पर खुशी वे भी पा जाते। बीड़ी-चाय का खर्च निकल आता। सोनू कैसे चुप हो, उन्हें समझ नहीं आ रहा था। यूँ उनका दिमाग काफी उर्वर था। नई-नई खुराफातों का एक अच्छा खासा कारखाना! मोहल्ले में वक्त बेवक्त के शगूफों के

लिए ही वे ज़्यादा जाने जाते थे। मस्ती में उनका कोई सानी नहीं था। कमीज़ जब कन्धे पर होती तो खरी कहने में कभी चूकते नहीं। शिब्बू की कॉपी पास ही पड़ी थी। उसमें से एक कागज़ फाड़ा और हवाई जहाज़ बना कर उड़ा दिया। सोनू ने हवाई जहाज़ उठा लिया। एक-दो बार कमरे में उड़ाया, फिर उड़ाता हुआ दरवाज़े से बाहर चला गया।

सारा मोहल्ला और आधा शहर भगवती की जान पहचान का था। गलियों के रास्ते उनकी ज़ुबान पर रखे रहते। बचपन इसी शहर में बीता। यहीं तालीम हुई और यहीं नौकरी में लग गए। डाकिए की नौकरी यूँ भी घूमाफिरी की थी। आठ-नौ साल की नौकरी हो गई थी, पर हालत! जैसे अंगद की टाँग हो, ज़रा भी टस से मस न होती। बहनों को ब्याहना था,

गाँव भी कुछ-न-कुछ भेजना होता। इधर भी किसी-न-किसी का देना हर वक्त सर पर बना रहता। चौहत्तर में डाक-तार कर्मचारियों की काफी बड़ी हड़ताल हुई, उसी हड़ताल में भगवती निलम्बित कर दिए गए। हड़ताल विफल हो गई और बातचीत, टेबिल पर रखा गई। मामला सुलट जाता पर आपातकाल लग जाने से मामला बरफ की थैली में चला गया। भगवती ने कहा, "इसे कहते हैं खड़ी मटर पर पाला गिरना।" मैंने कहा, "पानी ढंग से न चल पाया, वरना पाला गिरने का असर न होता और न तिलियाँ मरतीं।" बीच-बीच में उन दिनों बिना पर वाली खबरें उड़ती रहतीं। लोगबाग दौड़-भाग में लग जाते। बीच में खबर उड़ी कि सारे निलम्बित लोग बर्खास्त किए जाने वाले हैं। खबर से सबके कान खड़े हो गए और पाँवों में चरखी लग गई, लेकिन भगवती नहीं हिले। ग्यारह-बारह तक दुर्गा चौरे से उठ जाते थे लेकिन उन दिनों दो-ढाई बजने लगा और उनकी हँसी पहले की बनिस्बत ज़्यादा चौड़ी हो गई। दिन आते-जाते और उनके साथ दुमछल्लों-सी जुड़ी खबरें भी।

यह सब गुज़रे ज़माने का किस्सा हो चुका था। निलम्बित किए गए लोग बहाल हो गए। पर गुज़रे दिन ऐसे ऊनी नहीं थे कि धूप दिखाते ही ठीक-ठाक हो जाते। तीन लम्बे सालों की सीलन दीवारों के पौर-पौर में बैठ गई थी। भगवती अब भी पोस्टमैन यूनियन के सेक्रेटरी थे, पर पहले-सा जोश अब किसी में नहीं था। विफल लड़ाई की पस्ती अभी तक कायम थी। लड़ाई-भिड़ाई की बातों से लोग कतराने लगते। रामप्रसाद ने एक दिन कहा, "घूस तो खदेड़ दी पर ज़मीन जो पोली हो गई, उसमें भरने को मिट्टी कहाँ से आएगी?"

हवाई जहाज़ के साथ-साथ सोनू बाहर निकल गया था। कमरे के कोने में उसके छोटे-छोटे कपड़े के जूते, दो लाल चिड़ियों की तरह बैठे थे। "सोनू को कुछ खिला देतीं," कपड़े पहनते हुए भगवती ने कहा। भौजी ने एक बार सुनकर भी कोई जवाब नहीं दिया। भगवती ने जब दुबारा कहा तो आटा निकालते हुए उन्होंने जवाब दे दिया कि "उसने रोटी छुई ही नहीं, दूध के लिए मचल रहा है सुबह से।" दूध लेना दो दिन से ही बन्द हुआ था। दूध के भाव अचानक चढ़ गए थे।

हमारे यहाँ चार मौसम होते हैं। सर्दी, गर्मी, बरसात और बजट। बाज़ार एक मज़ेदार जगह थी। एक ऐसा बैरोमीटर जिसका पारा नीचे जाते कभी किसी ने नहीं देखा था, वह मौसम के हिसाब से ऊपर चढ़ता था। शहर पहाड़ी था, सो बाज़ार भी पहाड़ पर था, तो भाव क्या पर्वतारोही थे? एक चीज़ का भाव चढ़ता तो दूसरी चीज़ों के भाव भी उचक-उचक कर ऊपर चढ़ जाते। गल्ला महँगा होता तो तेल, तिलहन, तरकारी से लेकर ताड़ी और अखबार तक सारी चीज़ें

उसका पौंचा पकड़कर आगे बढ़ जातीं, दूध वाले ने कहा, "खली और घास आसमान पर धरा है, दूध नीचे कैसे उतरे?" पगार लड़भिड़ कर एक डग भरती और बाज़ार खुले साण्ड की तरह भागने लगता। भौजी धैर्यवान थीं, बरसों से बाज़ार से पटरी बिठाती आ रही थीं। लेकिन भगवती ऐसे मौकों पर कलप जाते।

सोनू जब लौटा तो हवाई जहाज़ की जगह उसके हाथ में तागे से बँधा पिंजारा था। हरे-हरे पंखों वाला, उड़ता तो पिन...पिन-सी आवाज़ होती। सोनू तागे को झटके दे-देकर उसे उड़ा रहा था। कमरे में आते ही उसने पूछा, "बिल्ली कहाँ गई?" फिर भगवती के पास आकर बोला, "बिल्ली ऐसे क्यों नहीं उड़ती?" भगवती हँस दिए। जैसे हँसी ही उसके प्रश्न का जवाब हो। भगवती अखबार देख रहे थे। और उत्तर की चिन्ता किए बगैर सोनू अपना पिंजारा उड़ा रहा था। वह टुनकी मारता, पिंजारा एक झोल खाकर नीचे आ जाता, वह फिर लम्बा ठील छोड़ देता, तागा खूब लम्बा था, पिंजारा ऊपर तक उड़ जाता। सोनू को मज़ा आ रहा था। बीच-बीच में वह भगवती की ओर देखता और दोनों हँस देते। सारा कमरा पिंजारे की पिन...पिन... से भर गया था। एक छोटी-सी झिलमिलाती हरी रोशनी कमरे में चक्कर लगा रही थी।

अपने खेल में सोनू की दोस्ती भगवती से ही थी। भौजी को वह शामिल नहीं करता। वे उसे झिड़क देतीं। मैंने सोनू को चुम्मी लेना सिखा दिया था। अब एक गाल की चुम्मी लेकर वह मेरी नकल में कहता, "मीठी वाली दो।" फिर दूसरे गाल पर चुम्मी ले लेता। एक दिन भजियों का कार्यक्रम था। कप्पू, मैं और भगवती बैठे थे। तभी सोनू कहीं से खेल-खाल कर अन्दर आया और सीधा भौजी के पास जाकर बोला, "चुम्मी दो।" भौजी ने झिड़क दिया, "चल हट, जाने कहाँ से कुछ भी सीख कर आ जाता है।" हम तीनों ज़ोर-से हँस पड़े। भौजी झेंप गईं। उन्होंने सोनू के गाल पर एक चिकौटी काटी और प्यार से हल्की-सी चपत लगा दी। सोनू हमारे पास आ गया। भगवती उसके कान में

फुसफुसाकर उसे दुबारा भेजने की कोशिश करते रहे, पर वह नहीं गया और शरमाकर बाहर भाग गया। भौजी के अन्दर कुछ सोया हुआ अचानक जाग गया था, जो उनके चेहरे पर झिलिर-मिलिर हो रहा था। अगर इस वक्त कमरे में कोई न होता तो भौजी ज़रूर सोनू को भींच लेतीं। मध्यवर्गीयता अजीब संकोचों की झरबेरी थी। कपड़े धुले-धुले होते और दस तारीख आते-आते हाथ जेबों में कोलम्बस की तरह भटकने लगते। बच्चे खिलौनों के सपने देखते। मुफ्त में लाड़ कैसे हो? सोनू या शिब्बू कभी भौजी के गले में बाँह डालकर लूम जाते, तो उन्हें अलग करते हुए वे कहतीं, "मुझे ऐसे लाड़ लड़ाने नहीं आते।" मैंने एक दिन भौजी से कहा, "क्या भौजी तुम बिलकुल लाड़ ही नहीं करतीं, भगवती भाई को देखो सोनू को कन्धे पर बिठाकर पूरे जुमेराती का चक्कर लगा आते हैं।" भौजी ने बेचूके जड़ा, "बहुत देखे लाड़-लड़ाने वाले, गाँव में अम्मा-बाबूजी के सामने पूछो, किसी दिन सोनू को गोद में भी लिया हो, सोनू के पैदा होने के पूरे दस दिन बाद पहुँचे थे।" भगवती को इस जवाब की उम्मीद नहीं थी। उसकी हेकड़ी थोड़ी पिचक गई। अटक-अटककर सफाई पर उतर आए, "क्या करें यार... अब बाबूजी का ख्याल तो रखना ही पड़ता है... हमारी अम्मा कहती हैं... बाबूजी ने हम भाई-बहनों को तोकना तो दूर कभी एक खिलौना तक लाकर नहीं दिया..." अजीब रिवाज़ थे। बच्चों से, बूढ़ों के सामने प्यार करना, एक खिलौना तक लाना एक अपराध की तरह माना जाता था।

रोटी बन गई थी। भगवती चाह रहे थे कि जीम कर जल्दी से निकल जाएँ। पर तभी अचानक किसी चीज़ में उलझकर पिंजारे का तागा टूट गया। पिंजारा बाहर उड़ गया। सोनू भी पीछे-पीछे दौड़कर बाहर तक गया पर उल्टे पैर लौट आया। "अरे तुम्हारा पिंजारा कहाँ गया?" भगवती ने पूछा पर उत्तर देने की बजाए सोनू ने कहा, "भूख लगी है।" भगवती ने उठते हुए कहा, "हाँ आओ, अपन दाल-भात खाएँगे।" सोनू नहीं उठा और ज़मीन पर पैर घसीटते हुए उसने कहा, "नहीं दूध...।" पैर घसीटना ज़िद की चेतावनी की तरह था। 'पिंजारे को भी इसी वक्त उड़ना था' भगवती ने सोचा। सोनू रुआँसा होने लगा था। झूठमूठ जब वह ज़िद करता तो बुक्का तो खूब फाड़ता, पर आँखें नहीं भीगती थीं। अभी उसकी आँखें भीगने लगी थीं। भगवती न होते तो भौजी उसे डाँटडूँट कर चुप करा लेतीं। लेकिन भगवती डाँटडपट नहीं करते थे। वे हर बात का एक ठाठदार तोड़ ढूँढ़ना चाहते थे। ठाठ बना रहना चाहिए, ठाठ के सर पर मज़े की टोपी, टोपी में तुर्रा, तुर्रे में हँसी। उनका मन अनमना होने लगता तो वे मन से एक मेंढक निकालते और लोगों के बीच फेंककर हड़कम्प मचा डालते। कमतरी का

एहसास वहाँ पर भी न मार पाता। बत्तीस दाँतों पर भला दो आँखों की क्या बिसात?

निलम्बन के लम्बे-चौड़े भवन में जब चूहे दण्ड पेल रहे थे और कनस्तर कनटोप की तरह उल्टा पड़ा था, ऐसे ही एक दिन रात में भगवती ने एक ज़बरदस्त हंगामा मचाया। रात ग्यारह-साढ़े ग्यारह का वक्त रहा होगा, सर्दियाँ थीं, लोग घरों में घुस चुके थे। अचानक भगवती कहीं से एक लकड़ी की तलवार लेकर प्रकट हुए, चौरस्ते पर आए, और गरजने लगे। सोते लोग जाग उठे, कुछ बाहर भी आ गए, भगवती ने आवाज़ दे-देकर आसपास के सारे दोस्तों को घर से निकाल लिया। बोले, "डण्डा, पत्थर, छाता जो हथियार मिले, ले लो।" सबने पूछा आखिर हुआ क्या? पर उनने कुछ नहीं बताया, पूरा जुलूस लेकर घर के बगल वाली कायस्थपुरे की गली में घुस गए। थोड़ी दूर चलकर सबको रोक दिया। सामने एक मरियल-सा कुत्ता बैठा था, उससे चार-पाँच हाथ दूर से ही वे गरजे, "अब भोंक साले... अब भोंक अगर दम है तो... हमारी गली की रोटी खाता है... हमीं पर भूँकता है...।" इसके साथ ही वे पीछे मुड़े, बोले, "टुकड़े उड़ा दो साले के... टूट पड़ो...।" कुत्ता शोर सुनकर भाग गया। भगवती ने तलवार नीचे करके "पी.एम.जी. है साला, भाग लिया," कहकर लौट पड़े। झुँझलाहट दूर हो गई, लोग ठठाकर हँसने लगे। चौधरी कक्का ने कहा, "वाह भगवते, मज़ा ला दिया... कल की चिलम मेरी रही।"

धूप थोड़ी दरवाज़े के और अन्दर तक आ गई। उसने एक बार तो अपना चमकदार हाथ बढ़ा के सोनू का पैर भी छू लिया। भगवती ने धूप को थोड़ा-सा डपटा तो वह वापस दरवाज़े की ओर सिमट गई लेकिन सोनू ने मचलना बन्द नहीं किया। भगवती ने चींटियों के मरने का, ज़मीन के रोने का, गुड्डे के गुस्सा हो जाने का आदि अनेक बहाने बनाए पर वह नहीं माना, तो अन्त में भगवती ने सोनू को गोद में उठा लिया कि "आओ अपन नाव बनाएँगे...।"

भौजी ने खाने को बुलाया पर भगवती सोनू को पकड़े बैठे रहे। बच्चों को पीटना उन्हें पसन्द नहीं था। उन्हें शरारती और उधमी बच्चे पसन्द थे। एक दिन खिलौनों की एक दुकान के पास से गुज़रते हुए उन्होंने कहा,

"बेतुके खिलौने हैं, ऊपर से कितने महँगे," अन्दर ही अन्दर कुछ घुमड़ने लगा, चेहरे पर बल पड़ गए, लगा कोई चीज़ जैसे काफी दिनों से इकट्ठी हो रही थी जो उस दिन फूट पड़ी थी। "खिलौने इतने महँगे हैं कि कौन खरीदेगा इन्हें? जो लोग खरीद लेते हैं वे भी घरों में इतने ऊँचे पर सजाकर रख देते हैं कि बच्चे का हाथ न पहुँच पाए। खिलौना जैसे सजाने की चीज़ हो! जब बच्चे ज़िद करते हैं तो बेहद चिढ़कर एकाध खिलौना उतारकर देंगे कि... तोड़ना मत, तुम हर खिलौना तोड़ डालते हो। पूछो, खिलौने खरीदकर किसके लिए लाए थे?..." काफी देर तक इसी तरह वे बोलते रहे, मैं सुनता रहा। सोनू को अक्सर वे नई-नई खुराफातें सिखलाते रहते। भौजी टोकती, "तुम्हें क्या, तुम तो डाकघर चले जाते हो, सम्भालना तो मुझे पड़ता है दिनभर।" भगवती हँस देते। सोनू सबसे छोटा था, लाड़ला था, सो ज़िद्दी भी ज़्यादा था। भगवती सोच रहे थे कोई नया खेल सूझ जाए और सोनू चाले से लग जाए।

दूध से ज़्यादा मज़ेदार थे दूध वाले। दूध वाले की घुँघरू बँधी साइकिल... जिसकी आवाज़ सोनू पहचानता था। डबरा जब ओटले पर रखा जाता तो वह डबरे को, दूध का नापना और भगौनी में भरना, एकटक देखता रहता। डबरे में झाँकता और उसकी दूधिया आँखें कौतूहल से भर जातीं। डबरे से मुँह हटाकर उसका नन्हे आश्चर्य से भरा सवाल होता, "इत्ता दूध कौन पीता है?" दूध वाला मुस्करा देता। अर्थशास्त्र से अभी सोनू का कोई ताल्लुक नहीं था। दूध जब सिगड़ी पर रखा होता तो वह आसपास ही मण्डराता रहता। एक दिन उसके सामने ही, उसका सारा दूध बिल्ली पी गई और वह खुश होकर ताली बजाता रहा। दो दिनों से दूध घर में लेना बन्द था। कल तो वह किसी तरह मान गया था पर आज ज़िद ठान बैठा था। उसे समझ नहीं आ रहा था कि घुँघरू वाली साइकिल भी निकली थी, उस पर डबरे भी लटके थे फिर घर में दूध क्यों नहीं आया।

एक के बाद एक उपाय विफल हो गए। लग रहा था कि सोनू आज नहीं मानेगा। बात एक दिन की होती तो शायद भगवती बाज़ार जाकर दूध ले भी आते। जब सोनू भगवती के हाथों से छूटने को ज़्यादा ही हाथ-पैर चलाने लगा, तो उन्होंने पूछा, "अच्छा तुम्हें

दूध पीना है न?" मचलना छोड़कर सोनू ने छोटा-सा हुँकारा भरा। भगवती ने अपने दोनों घुटनों के बीच उसको खड़ा किया और बोले हमारी बात सुनो।

– तुमने गैया देखी है न सोनू?

– हूँऽऽऽ (रुलाई में भीगी एक छोटी-सी 'हूँ' बाहर आई)।

– गाय दूध देती है, है न?

(सोनू ने जवाब में हल्के-से मुण्डी हिलाई। जैसे डाल पर कोई कपास का फूल हिला हो)

– गाय का बछड़ा होता है?

– एकदम छोटा-सा... (सोनू ने थोड़ा-सा चहककर कहा, तो दरवाज़े में बैठी बहुत-सी चिड़ियाँ उड़ गईं)।

– हाँ एकदम छोटा-सा, कक्का के यहाँ देखा था न तुमने?

– कैसा अच्छा था न, भूरा-भूरा!

– और बछड़ा गाय का दूध पी रहा था, है न?

– हाँ... ('हाँ' एकदम छोटा-सा था। और आँखों में सवाल उग आया था कि इसका क्या मतलब है)।

– सोनू बेटा! (भगवती ने कुछ ऐसे कहा जैसे कोई रहस्य बता रहे हों) बछड़ा गाय का दूध पीता है, फिर जब बछड़ा बड़ा होता है तो उसके भी सींग निकल आते हैं –

– सच्ची?

सोनू एकदम चुप हो गया। उसकी छोटी-छोटी आँखें आश्चर्य से फैल गई थीं। क्या वहाँ सींग हिल रहे थे, डर के सींग? भगवती ने सोनू से आँखें नहीं मिलाईं, तेज़ी-से उठे और चप्पल पहनकर बाहर निकल गए। जब तक उन्हें कोई रोकता, दूर जाती साइकिल की खड़-खड़ाहट भर रह गई थी।

राजेश जोशी: हिन्दी के लेखक, कवि और नाटककार हैं। अपने कविता संग्रह *दो पंक्तियों के बीच* के लिए *साहित्य अकादमी पुरस्कार* से सम्मानित। इसके अलावा *मुक्तिबोध पुरस्कार*, *माखन लाल चतुर्वेदी पुरस्कार*, *श्रीकान्त वर्मा स्मृति सम्मान* से नवाज़े जा चुके हैं। इनकी कविताएँ अँग्रेज़ी, रशियन, जर्मन, उर्दू और कई भारतीय भाषाओं में अनुवादित हो चुकी हैं। भोपाल में रहते हैं।

सभी चित्र: शिवांगी: स्वतंत्र रूप से चित्रकारी करती हैं। कॉलेज ऑफ आर्ट, दिल्ली से चित्रकला, फाइन आर्टस् में स्नातक। स्कूल ऑफ कल्चर एंड क्रिएटिव एक्सप्रेशन्स, अम्बेडकर यूनिवर्सिटी, दिल्ली से विज़्युअल आर्ट्स में स्नातकोत्तर की पढ़ाई की है। दिल्ली में निवास।

यह कहानी सन् 2001 में वाग्देवी प्रकाशन द्वारा प्रकाशित राजेश जोशी के कथा संचयन *कपिल का पेड़* से ली गई है।